REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 11 | AUGUST - 2022

तारसप्तक की कविताओं में सामाजिक सौन्दर्य चेतना का अध्ययन

लक्ष्मी कान्त मिश्रा[1] & डॉ. लता द्विवेदी[2]
[1]शोधार्थी हिन्दी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.).
[2]प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय विज्ञान महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.).

सारांश –

कविता की दुनिया की सार्थकता इसी में है कि वह पाठक को इस दुनिया की ओर उन्मुख करती चले। समाज एवं सौन्दर्य चेतन कवि कई पड़ावों पर सजग होता है। वह समग्र व्यवस्था की गहरी पहचान रखता है। यथार्थ जीवन मूल्य एवं सौन्दर्य परिणतियों का साक्षात्कार करता है। इसके लिए कवि को आत्म संघर्ष करना पड़ता है। समाज, चेतन कवि के हर प्रयास का केन्द्र बिन्दु मानवीय सौन्दर्य की भावना ही है।

मुख्य शब्द – तारसप्तक की कविता, समाज एवं सौन्दर्य चेतन कवि ।

प्रस्तावना –

अज्ञेय कविता सम्बन्धी विचारों से नये कवि की सौन्दर्य से नये कवि की सौन्दर्य दृष्टि का स्पष्ट परिचय मिल जाता है। मैं स्वान्तः सुखाय नहीं लिखता। कोई भी कवि केवल मात्र, स्वान्तः सुखाय लिखता है या लिख सकता है। यह स्वीकार करने में मैंने अपने को सदा असमर्थ पाया है। अभिव्यक्ति सामाजिक या असामाजिक वृत्तियों की हो सकती है। अभिव्यक्ति किसी के प्रति है और किसी भी ग्राह्य बुद्धि के आगे उत्तरदायी है। (जो व्यक्ति या व्यक्ति खंड) लिख रहा है और जो सुख पा रहा है, के हैं फिर भी पृथक। भाषा उनके व्यवहार का माध्यम है और उसकी माध्यमिकता इसी में है कि वह एक से अधिक को बोधगम्य हो। प्रयोगशीलता की ओर प्रेरित करने वाली सबसे बड़ी शक्ति यही है। कवि अनुभव करता है कि भाषा का पुराना काव्यत्व उसमें नहीं है– शब्दों के साधारण अर्थ से बड़ा अर्थ हम उसमें भरना चाहते हैं।[1]

मुक्तिबोध जिन्हें 'नयी कविता का आत्मसंघर्ष' कहते हैं, वह नयी कविता की आंतरिक असंगतियों के विरूद्ध आत्मीय संघर्ष और आंतरिक संघर्ष के सिद्धांत के प्रति निष्ठावान थें उन्होंने सृजन के स्तर पर कला के संघर्श को अस्तित्व के संघर्श से एकाकार कर किया था। अपनी गहन अंतर्दृष्टि के आधार पर उन्होंने सौन्दर्य सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उनके मतानुसार सौन्दर्य कोई स्थाई भाव नहीं बल्कि वैयक्तिक एवं बाह्य उपकरणों से उसमें संशोधन परितर्वन होता रहता है। "वास्तव में विशुद्ध सौन्दर्यवाद एवं कट्टर मार्क्सवाद के मानसिक द्वन्द्व से ही आलोचक मुक्तिबोध का नया जन्म हुआ। एक ओर तो यह दृष्टिकोण था कि कला या साहित्य का उद्देश्य स्वान्तः सुखाय सौन्दर्य सृजन ही है। विषाद अथवा पीड़ा उसके क्षेत्र से बाहर की वस्तु है।

'तारसपतक' तक आते–जाते मुक्तिबोध कला की इन दोनों विचारधाराओं के दौर से गुजर चुके थे और उन्हें दोनों के अतिवाद से असन्तोष था क्योंकि विशुद्ध सौन्दर्यवाद एवं उस मार्क्सवाद में उन्हें एक अतिवादजनित उथलापन प्रतीत हुआ है।"[2] मुक्तिबोध के काव्य का एक अलग सान्दर्यशास्त्र है और शायद वही चुनौती है।

आज की कविता में यथार्थ के चित्रण में जीवन के सुन्दर असुन्दर दोनों ही रूप समान भाव से परिगृहीत होते हैं। आज का कवि दोनों के प्रति समान रूप से जागरूक है। वह कमल के साथ कीचड़ के महत्व को जानता है और फूलों के साथ कांटों के अविकल चित्रण है। इसी संदर्भ में शमशेर बहादुर सिंह का विचार है कि– "अपनी कला चेतना को जगाना और उसकी मदद से जीवन की सचाई और सौन्दर्य को अपनी कला में सजीव से सजीव रूप देते जाना इसी को मैं साधना समक्षता हूँ और इसी में कलाकार का संघर्ष छिपा हुआ देखता हूँ। कला में भावनाओं के तराश खराश चमक तेजी ओर गर्मी वब उसी से पैदा होगी, उसी संघर्ष और साधना से जिसमें अंतर बाह्य दोनों का मेल है।"[3]

'नयी कविता के सौन्दर्य बोध में ठोस बौद्धिकता, वैज्ञानिकता तथा यथार्थता है। जीवन की वास्तविकता को स्पष्ट रूप से और ईमानदारी से चित्रित कर देना ही जीवन का एकमात्र सत्य है और जो सत्य है वही सुन्दर है। आज का कवि सौन्दर्य बोध के लिए वस्तु के गुण एवं प्रभाव की ओर दृष्टि नहीं डालती अपितु मन के भावों के अनुरूप ही उसको अपनाता है। नयी कविता के सौन्दर्य में समाजजन्य परिस्थितियों जीवन के वैषम्य, कुंठा, घुटन, संघर्ष आदि का महत्वपूर्ण स्थान है।'

जीवन में जितनी कुरूपता, विरूपता, कटुता, वासना और गंदगी है। उन सबको अभिव्यक्त करके नया कवि नये सौन्दर्य के प्रतिष्ठा में संलग्न है, वह विरूपता और असुन्दरता को भी सौन्दर्य बोध के लिए एक विशेष महत्व और मूल्य की वस्तु मानता है।

प्रत्यक्ष रूप से 'नयी कविता में' सौन्दर्य के प्रतीक पुराने या परम्परागत उपमानों को बदलकर नया कवि नये सौन्दर्यमान स्थापित करने में संलग्न है। इस दृष्टि में अज्ञेय अग्रणी हैं।

सप्तक की कृतियों के सौन्दर्य सत्य की मूल्यांकन दृष्टि तद्युगीन कविता के तट में जाने में सफल हुई है और उसमें संलग्न कवियों की टीम ने उसमें निहित लोकमंगल की संभावना को पहचान कर कविता के सौन्दर्य सत्य को रेखांकित करने का प्रयास किया है। सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् मानवीय जीवन मूल्यों और सांस्कृतिक परिवेश के मौलिक तथा चरम सत्य माने जाते हैं। इसी त्रिपथगा में सप्तक के कृतियों का सौन्दर्य सत्य भी उद्घाटित हुआ है।

सप्तक के रचनाकारों की दृष्टि में कृतियों को सौन्दर्य सत्य केवल वस्तु का गुण न होकर मानवीय चेतना की अभिव्यक्ति है। कविता में मानवीय सत्य का सम्प्रेषण उसका विधायक तत्व है। कवि चेतना का यह सक्रिय भाव अभिव्यक्ति और संप्रेषण को उद्घाटित करता है। इस संप्रेषण–उद्घाटतन में कृतियों का सौन्दर्य आंतरिक अंग बनकर उभरता है। हर कलाकार अथवा रचनाकार अपने कृतियों के समात्मभाव औश्र उसकी सृजनात्मक शक्ति को सौन्दर्य सत्य के रूप में सृजित करना चाहता है। इस दृष्टि से देखा जाय तो सप्तक के कृतियों का सौन्दर्य सत्य वस्तुगुण, मन का भाव अथवा व्यंजना के रूप में कहीं न कहीं अपना स्थान ग्रहण करते हैं और स्थायित्व प्राप्त करते हैं। चेतना का सौन्दर्य भाव किसी भी वस्तु को सुन्दर बना देता है। बाह्य और वस्तुगत इन उभयरूपों में सप्तक का सौन्दर्य सत्य रूप तत्व की अभिव्यक्ति करता है और यही अभिव्यक्ति कृतियों के सौन्दर्य का स्वरूप है। जीवन का भाव रूप किसी भी कृति को मर्मस्पर्शी बनाता है और अभिव्यक्ति उसे सुन्दर बनाती है। यथार्थ की भूमिका में ही कृतियों का सौन्दर्य सत्य सृजित होता है। जीवन में जितनी कुरूपता, विरूपता, कटुता और वासनात्मक गंदगी है, उन सबको सप्तक का कृतिकार अभिव्यक्ति के माध्यम से अपनी रचनाओं में नये सौन्दर्य सत्य की प्रतिष्ठा की है। वह विरूपता और सुन्दरता को भी सौन्दर्य सत्य के लिए एक विशेष महत्व और मूल्य की वस्तु मानता है। डॉ. लक्ष्मीकांत वर्मा के शब्दों में– "आज के कवि की विशिष्टता इस बात में ही सन्निहित है कि उसकी संवेदनाएं तीव्र एवं सशक्त होती है और वह जीवन के उन तत्वों एवं जीवन के तथ्यों एवं अनुभवों का संकलन करता है, जिसकी हम साधारणतः उपेक्षा कर देते हैं और इस प्रकार वह साधारणता की पंक्ति से पृथक होकर विशिष्ट मानव बन जाता है।"[4]

कविता की दुनिया की सार्थकता इसी में है कि वह पाठक को इस दुनिया की ओर उन्मुख करती चले। समाज एवं सौन्दर्य चेतन कवि कई पड़ावों पर सजग होता है। वह समग्र व्यवस्था की गहरी पहचान रखता है।

यथार्थ जीवन मूल्य एवं सौन्दर्य परिणतियों का साक्षात्कार करता है। इसके लिए कवि को आत्म संघर्ष करना पड़ता है। समाज, चेतन कवि के हर प्रयास का केन्द्र बिन्दु मानवीय सौन्दर्य की भावना ही है।

गिरिजा कुमार माथुर के 'मंजीर', 'नाश और नर्माण', 'धूप के धान', 'शिलापंज चमकीले', में उनके अनुभव क्षेत्र की समाज जीवन दृष्टि और मूल्य बोध की दृष्टि विकसित और व्यापक है। उनके स्वरों में संयम और दृढ़ता है। कतिपय कतिवाएं कवि की मानवतावादी भावधारा को प्रत्यक्ष करती है। मुक्तिबोध की रचनाओं में व्यक्ति की संकीर्णता से मुक्त होने का प्रयास परिलक्षित होता है। 'भारत', इतिहास और संस्कृति, चांद का मुह टेढा है, जैसी रचनाओं में कवि ने मानव जीवन में पनपने वाले सौन्दर्य और मनुष्य के प्रति विश्वास को जीवित रखा है। शमशेर बहादुर एक आदर्श प्रगतिशील कवि के रूप में 'दूसरा सप्तक' की टीम में उपस्थित होते हैं। उनका शुद्ध रूपवादी प्रयोगवादी, समाज एवं सौन्दर्य चेतना का रूप अपनी पूरी समग्रता में उतरा है। बात बोलेगी हम नहीं, कुछ कविताएं, 'उदिता' की रचनाओं में कवि की समाज और सौन्दर्य चेतना की मान्यताएं बिलकुल साफ हैं। उनकी कविताओं में सामाजिकता में लीन हो जाने की छटपटाहट है।

विश्लेषण –

सप्तक के पुरोधा अज्ञेय जी के काव्य सृजन का संकल्प और मूल्य सृजन का उन्मेष समाज एक व्यवस्था से सौन्दर्य सत्य की मांग करता है। अज्ञेय का आस्थावान् व्यक्ति साधारण नहीं, विवेकवान व्यक्ति है। उसको मूल्य की प्राप्ति अपने विवेक से होती है, वही उसे मूल्य की समझ, चुनाव का संकल्प और मूल्य सृजन का उन्मेष देता है। उनका 'व्यक्ति' मूल्य शोध एवं सृजन के लिए समाज एवं व्यवस्था से स्वतंत्रता की भी मांग करता है किन्तु इन सारी बातों के बीच व्यापक समाज की बात पीछे छूट जाती है, सामने दिखलाई पड़ता है। मूल्य–शोध करता निरीह अथवा गर्वभरा अकेला व्यक्ति जो वैयक्तिक स्तर पर उपलब्ध मूल्य रूपी मोती को दूसरों को दिख–दिखाकर अपने भाग्यशाली होने का प्रमाण देता है।

अज्ञेय की आस्था व्यक्ति और समाज के बीच 'सेतु' बनने की चेष्टा भी करती है। 'सेतु' की आस्था पलायनवादी नहीं है, इसलिए 'मैं वहां हूँ' कविता में वह कहता है–

"दूर–दूर दूर..... मैं वहां हूँ,
यह नहीं कि मैं भागता हूँ,
मैं सेतु हूँ,
जो है और होगा दोनों को मिलाता हूँ।"[5]

यह सही है कि सामाजिक मूल्यहीनता को अनदेखा करते हुए उससे भागकर किसी कन्दरा में हमेंशा के लिए नहीं छिप जाते किन्तु वैयक्तिक स्तर पर आस्था स्थापित करते हुए वे जिस 'सेतु' का निर्माण करना चाहते हैं वह अभी दूर, बहुत दूर हैं। जो है वह सड़ता हुआ गंधाता समाज है, जो होगा वह अभी बहुत दूर है, इस बीच की दूरी को अकेले मानव की आस्था मिटाना चाहती है। वैयक्तिक स्तर पर किसी भीव्यक्ति को यह भावना बहुत अच्छी है। सब व्यक्ति इसी तरह सोचने लगे और तद्नुसार आचरण करें तो समाज अवश्य बदल सकता है, किन्तु व्यावहारिक जगत में ऐसा होता नहीं। अकेले व्यक्ति की आस्था कितनी ही प्रखर क्यों न हो उससे समाज नहीं बदलता। समाज तब बदलता है जब आस्था जन–जन तक पहुंचे, प्रत्येक जन को उपलब्ध हो। जिस समाज में कुछ ही व्यक्तियों को इतनी फुर्सत हो कि वह आस्था की बात कर सके, शेष व्यक्तियों के पास केवल भूख प्यास आदि के संवेग हों वहां अकेले व्यक्ति की आस्था सुविधा प्राप्त व्यक्ति की आस्था बन जाती है। ऐसा सुविधा प्राप्त व्यक्ति यदि दूर से ही यह सोचकर अपने को परिमामंडित अनुभव करता है कि–

"यह जो गिट्टी फोड़ता है
मड़िया में रहता है और महलों को बनाता है,
उसकी मैं आस्था हूँ।"[6]

तो इसमें आश्चर्य की बात नहीं। सप्तक के कवि सौन्दर्य सत्य के संदर्भ में पूर्ण सजग लगते हैं। सौन्दर्य सत्रू के उद्घाटन का भाव सभी में समान है। गिरिजा कुमार माथुर के काव्य का कला और शिल्प पक्ष भी विकासशील है। इसके नये और ताजे अपमान इनकी नयी और आकर्षक सौन्दर्य दृष्टि के परिचायक हैं।

गजानन माधव मुक्तिबोध का नाम अनुभूति की तीव्रता को लेकर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनकी अनेक रचनाओं में सौंदर्य लोक की अनुभूति और अभिव्यक्ति परिलक्षित होती है। इस कवि को विश्व मानव के

सुख दुःखों का एहसास सालता है। मुक्तिबोध के सौन्दर्य सत्य के सम्बन्ध में आचार्य शिव कुमार मिश्र का कथन है– "उनकी गहन अंतर्दृष्टि और सूक्ष्म बौद्धिक आत्मानुभूति में निहित है।.....घोर व्यक्तिवादी होने पर भी उनके सामाजिक चेतना ने उन्हें पथभ्रष्ट नहीं होने दिया है, अपने द्वन्द्व से लगातार जूझने की शक्ति दी है, जीवन और मनुष्य के प्रति, उनके विश्वास को जीवित रखता है।"[7]

इस प्रकार सप्तक के कवियों की कृतियों का सौन्दर्य सत्य उन बिन्दुओं का समूह हैं, जिसमें सभी तत्व समन्वित है। परिणामतः सप्तक का सृजन नये सौन्दर्य बोध और सत्य के विकासमान हुआ है। सप्तक के कृतियों के रचनाकारों ने जीवन का सत्य से ही नये सौन्दर्य बोध की प्राप्ति की है। सौन्दर्यनुशीलन के इन क्षणों में सप्तकीय अनुभूतियां कुण्ठित नहीं हुई अपितु उनका सौन्दर्य संतुलित सत्य का प्रकटीकरण ही हुआ है। वस्तुतः यह कहना सीमचीन होगा कि सप्तक के रचनाकार कविता को संकीर्ण घेरे में निष्प्राण धाराओं में प्रवाहित होने पर विश्वास नहीं करते। उनके सौन्दर्य सत्य का सोच और अन्वेषण विस्तृत है, जिनमें जनजीवन के समग्र सुन्दर असुन्दर कार्य–व्यापार समाहित है। वे अपने कृतियों में सौन्दर्य–सत्य की अभिव्यक्ति के अभिलाषी हैं।

सप्तक के कवियों को एक नये सौन्दर्य अनुभव की तलाश थी जिस अनुभव को या अनुभव से गुजरते हुए संघर्षों और संगतियों को साहित्य और कलाएं चित्रित करती हैं, उसे हम सौन्दर्य और संस्कृति का साहित्य स्वीकार करते हैं। "नये सौन्दर्य और संस्कृति के लिए हमें केवल बाहर की रोशनी कहीं अपने अन्दर की रोशनी को भी टटोलना होगा।"[8]

सप्तकीय साहित्य सृजन का भी अपना अलग संसार है, जहां सौन्दर्य और संस्कृति के प्रभाव की चर्चा भी है। डॉ. रामविलास शर्मा की दृष्टि में जो सर्जक यह मानते हैं कि "सामयिक घटनाओं और सामाजिक परिवर्तनों पर लेखनी नहीं उठानी चाहिए वे प्रायः शाश्वत सौन्दर्य की खोज में लगे रहते हैं।"[9] अज्ञेय का मत उपर्युक्त मत से विशिष्ट है वे किसी सीमा तक सौन्दर्य और संस्कृति के स्थाई सत्य एवं मूल्य के महत्व को स्थापित करते हैं। अज्ञेय की दृष्टि में "मानव विवेकशील प्राणी है। इसलिए कोई भी मूल्य आत्यन्तिक रूप से शाश्वत नहीं होता तथापि ऐसे मूल्य होते हैं जो अपेक्षाकृत स्थाई हो जाती हैं।"[10] अज्ञेय का मानना है कि सर्जनात्मक को उसके सौन्दर्य बोध के अतिरिकत पुष्ट नैतिक बोध से भी जुड़ा रहना चाहिए। अज्ञेय की दृष्टि में– "संस्कारवान् होने की कृपा ही आधुनिकता है।"[11]

सप्तक के कवियों की रचनाओं में सौन्दर्य चेतना की उपलब्धियों को मूल्यांकित कर सबल और तार्किक समर्थन के साथ उद्घाटित करना अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि कोई भी मूल्यांकन अंतिम पड़ाव तक स्थिर नहीं होता। किसी युग की रचनाओं में किसी को क्या मिलता है। यह बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि अुसंधाता किसी युग विशेष की रचना के पास किस उद्देश्य से जाता है। जब कविता के पास एक शोधार्थी की हैसियत से जाता है तब उसके साथ मूल्यांकन दृष्टि भी साथ–साथ जाती है। कविता की अपनी विलक्षणता होती है फिर भी उसका मूल्यांकन करते समय हम उसका संबंध आदि के अपने जीवन परिवेश से जोड़ते हैं।

निष्कर्ष –

सप्तक के कवियों की रचनाओं में सौन्दर्य चेतना को विविध संदर्भों में देखने के उपरांत यह कहना समीचीन लगता है कि इन कवियों में सौन्दर्य की संपृक्ति सर्वाधिक गहरी है। कवि की सामाजिक चेतना पर यथार्थ दृष्टि एवं रोमानी भाव सौन्दर्य का गहरा प्रभाव पड़ता है। कवि अपने वैयक्तिक साधना के मार्ग से सौन्दर्य चेतना को बदलना चाहता है। 'तारसप्तक' काल में ही उनकी कविता में सामाजिक चेतना का प्रवेश हो गया था। बाद में द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ सप्तक में सप्तकीय कवियों की सामाजिक चेतना में सौन्दर्य चेतना के नयी सजगता के दर्शन समाज एवं सौन्दर्य चेतना की दृष्टि से देखा जाय तो इस युग के कवियों का काव्य भावानुभूति और बौद्धिकता से ग्रस्त है। 'इत्यलम्', 'हरी घास पर क्षण भर', 'बावरा अहेरी' की कविताओं में अज्ञेय की सौन्दर्य–भावनाशीलता की अभिव्यक्ति बड़े ही सज धरातल पर हुई है। 'इन्द्रधनु रौंदे हुए थे', 'आंगन के परद्वार', 'करूणा प्रभामय', रचनाओं में अज्ञेय मूलतः समाज के यथार्थ परिवेश को प्रकट करते हैं। 'सागर मुद्रा', 'कितनी नावों में कितनी बार', 'क्योंकि मैं उसे जानता हूँ', उनके काव्य में क्षणवाद, भाववाद भोगवाद, दुःखवाद और उनके काव्य की प्रवृत्तियां सम्यक रूप से जीवन दृष्टि और मूल्यबोध को उद्घटित करती है।

संदर्भ –

[1] आत्मने पद, पृष्ठ 37–38, अज्ञेय
[2] ज्ञानोदय, अप्रैल 1963, पृष्ठ 91
[3] दूसरा सप्तक : वक्तव्य, पृष्ठ 80, शमशेर बहादुर सिंह, सम्पादक अज्ञेय
[4] नयी कविता के प्रतिमान, पृष्ठ 93, लक्ष्मीकांत शर्मा
[5] इन्द्रधनु रौंदे हुए थे, पृष्ठ 19, अज्ञेय
[6] इन्द्रधनु रौंदे हुए थे, पृष्ठ 19, अज्ञेय
[7] नया हिन्दी काव्य, पृष्ठ 271
[8] समकालीन साहित्य चिंतन–'नये रचनात्मक सौन्दर्य अनुभव की तलाश', पृष्ठ 68, डॉ. विनय, सं. डॉ. रामदरश मिश्र
[9] भाषा साहित्य और संस्कृति, पृष्ठ 127, राम विलास शर्मा
[10] आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृष्ठ 9, अज्ञेय
[11] लिखि कागद कोरे, पृष्ठ 67, अज्ञेय